आहार चिकित्सा

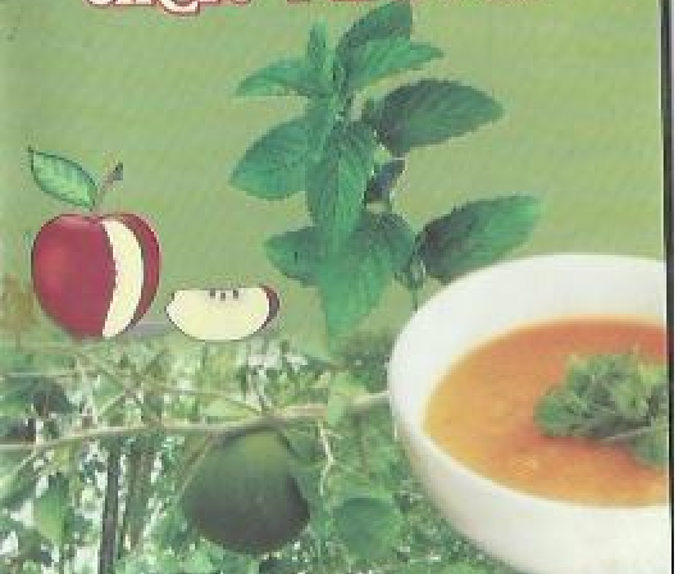

-श्रीराम शर्मा आचार्य

माता भगवती स्वचालित पुस्तकालय

यह पुस्तक आद्यशक्ति माँ गायत्री की कृपा से आपके पास आई है। इसे पवित्र स्थान पर रखें, परिवार में सबको पढ़ाएँ, मुख्य अंश नोट करें, उन्हें अपने आचरण में ढालें। पढ़कर पुस्तक किसी अन्य पात्र व्यक्ति को दे दें, ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन के जीवन को प्रकाशित करता चले। दीप से दीप जलता चले। आप भी कुछ पुस्तकें समाज में बाँटें।

सौजन्य से :

मूल्य : तीन रुपये

संसार में दिखलाई देने वाले शारीरिक एवं मानसिक दोषों में अधिकांश का कारण आहार संबंधी अज्ञान एवं असंयम ही है। जो भोजन शरीर को शक्ति और मन बुद्धि को प्रखरता प्रदान करता है, वही असंयमित अथवा अनुपयुक्त होने पर उन्हें रोगी एवं निस्तेज भी बना देता है। शारीरिक अथवा मानसिक विकृतियों को भोजन विषयक भूलों का ही परिणाम मानना चाहिए। अन्न दोष संसार के समस्त दोषों की जड़ है–''जैसा खाए अन्न वैसा बने मन'' वाली कहावत से यही प्रतिध्वनित होता है कि मनुष्य की अच्छी बुरी प्रवृत्तियों का जन्म एवं पालन अच्छे बुरे आहार पर ही निर्भर है। निःसंदेह मनुष्य जिस प्रकार का राजसी, तामसी अथवा सात्विकी भोजन करता है उसी प्रकार उसके गुणों एवं स्वभाव का निर्माण होता है।

कर्म के अनुसार ही मनुष्य का उत्थान पतन हुआ करता है । जो मनुष्य इतने महत्वूर्ण पदार्थ 'भोजन' के संबंध में अनभिज्ञ है अथवा असंयम बरतता है उसे बुद्धिमान नहीं कहा जा सकता । आध्यात्मिक उन्नति करने के लिए युक्ताहार विहार का नियम कड़ाई के साथ पालन करने के लिए कहा गया है, जो मनुष्य किसी भी क्षेत्र में स्वस्थ, सुंदर, सौम्य एवं समुन्नत जीवनयापन करना चाहता है उसके लिए भोजन संबंधी ज्ञान तथा उसका संयम बहुत ही आवश्यक है । भोजन के प्रति असंयमित व्यक्ति अन्य किसी प्रकार के संयम का पालन नहीं कर सकता । भोजन का संयम अन्य इंद्रियों के संयमोंके पालन करने में बहुत कुछ सहायक होता है ।

मनुष्य जो कुछ खाता है और जिसके बल पर जीता है, उसके विषय में 'क' 'ख' तक न जानना निःसंदेह लज्जा की बात है । कितने आश्चर्य का विषय है कि जो मनुष्य कपड़ों लत्तों, घर मकान और देश देशांतर के विषय में बहुत कुछ जानता है या जानने के लिए उत्सुक रहता है, वह जीवन तत्व देने वाले भोजन के विषय में जरा भी नहीं जानता और न जानना चाहता है । इसी अज्ञान के कारण हमारी भोजन संबंधी न जाने कितनी भ्रांत धारणाएं बन गई हैं । अनेक लोग यह समझते है कि जो भोजन जिह्वा को रुचिकर लगे, जिसमें दूध, दही, मक्खन आदि पौष्टिक पदार्थों का प्रचुर मात्रा में समावेश हो, मिर्च मसाले इस मात्रा में पड़े हों जिन्हें देखकर ही मुंह में पानी आए वही भोजन सबसे अच्छा है ।

जो निस्सार एवं तत्वहीन भोजन से पेट को पाटते रहते हैं उनका आमाशय शीघ्र ही अशक्त हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप दोनों मान्यताओं वालों को रोगों का शिकार बनना पड़ता है । रोग शरीर के भयानक शत्रु हैं--सभी जानते हैं किंतु ऐसा जानते हुए भी उनके मलमूत्र कारक आहार संबंधी त्रुटियों को दूर करने के लिए तत्पर होने को तैयार नहीं ।

भोजन का एकमात्र उद्देश्य भूख निवृत्ति ही नहीं है, उसका मुख्य उद्देश्य आरोग्य एवं स्वास्थ्य ही है । जिस भोजन ने भूख को तो मिटा दिया किंतु स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डाला वह भोजन उपयुक्त भोजन नहीं माना जाएगा । उपयुक्त भोजन वही है, जिससे क्षुधा की निवृत्ति एवं स्वास्थ्य की वृद्धि हो ।

विटामिनों की दृष्टि हरे शाक तथा फल आदि ही स्वास्थ्य के लिए आवश्यक एवं उपयुक्त आहार हैं । इसके अतिरिक्त क्षार नमक आवश्यक तत्व भी फलों तथा शाकों से पाया जा सकता है । अनाज के छिलकों में भी यह तत्व वर्तमान रहता है किंतु अज्ञानवश मनुष्य अधिकतर अनाजों को छील पीसकर यह तत्व नष्ट कर देते हैं ।

कहना न होगा कि प्रकृति जिस रूप में फलों, शाकों तथा अनाजों को पैदा और पकाया करती है, उसी रूप में ही वे मनुष्य के वास्तविक आहार हैं । उनको अतिरिक्त पकाने अथवा उनमें नमक, शक्कर आदि मिलाने की आवश्यकता नहीं है । किंतु मनुष्य का स्वभाव इतना बिगड़ गया है कि वह शाक भाजियों तथा अन्न आदि को उनके प्रकृत रूप में नहीं खा सकता ।

शरीर आहार से बनता है यह एक सुविदित तथ्य है । मन को भी ग्यारहवीं इंद्रिय कहा गया है । इस प्रकार मन भी शरीर का ही एक भाग हुआ । इस प्रकार आहार का स्तर जैसा भी होगा, शरीरगत स्वास्थ्य एवं संतुलन भी उससे प्रभावित होगा । व्याधियां जितनी आहार के सात्विक मानसिक होने, पोषण कुपोषण के कारण होती हैं, उतनी जीवाणुओं के कारण नहीं । इस प्रकार यदि आहार को ही मात्र साध लिया जाए तो परिपूर्ण रूप से स्वस्थ बने रहा जा सकता है । चिकित्सा के पीछे मूलभूत दर्शन यही है । तरह-तरह के सम्मिश्रणों से बचकर यदि एक समग्र आहार व्यक्ति विशेष के लिए सुझाया जा सके तो मन शोधन और बलवर्धन संभव है । इस संबंध में जानकारियों का अभाव ही भ्रांतियों को जन्म देता है ।

आत्मिक प्रगति का विचार करते ही सर्वप्रथम आहार साधना की बात सामने आती है । स्वाध्याय, सत्संग, कथा-कीर्तन, धर्मानुष्ठानों की तरह आहार में सात्विकता सदाशयता के समावेश को, आहार कल्प को भी आध्यात्मिक उत्कर्ष के अनिवार्य आधारों में सम्मिलित किया गया है । यह प्रयोग प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में तो यदा कदा चलते रहते हैं पर जिस मनोभूमि में, तप तितीक्षा युक्त वातावरण में यह कल्प साधना की जाती है वह कितनी फलदायी होती हैं, यह वे जानते हैं जो एक माह एक ही आहार पर रहे, स्वयं को बदलकर रहे । ऐसा परिवर्तन जो किसी और औषधि से संभव नहीं, कायाकल्प के तुल्य ही जिसे ठहराया जा सकता है, मात्र आहार साधना की ही फलश्रुति है ।

आहार चिकित्सा में प्रमुख सिद्धांत एक ही है । भांति भांति के मिश्रणों से बचा जाए, प्राकृतिक आहार को ही साधक की प्रकृति के अनुरूप दिया जाए । धातु परिशोधन व बल पुष्टि के लिए इससे बढ़कर और कोई साधन नहीं । एक ही आधार से संतोष कर उसे सजीव एवं प्राकृतिक रूप में लिया जाए तो उसके चमत्कारी परिणाम होते हैं । वन में विचरण करने वाले, प्रकृति के संपर्क में रहने वाले पशु पक्षी कहां मसालेदार भोजन खाते हैं, वे कभी अस्वस्थ होते देखे नहीं जाते । आहार शास्त्रियों ने मनुष्य के लिए सर्वश्रेष्ठ भोजन फल निर्धारण किया है । इनसे अधिक लाभदायक शीघ्र पचने वाला, जीवनी शक्ति वर्धक शुद्ध रक्त बढ़ाने वाला और कोई पदार्थ प्रकृति जगत में नहीं है ।

इनके बाद बारी आती है शाक तरकारियों की । ये सजीव तो हैं पर स्वादेन्द्रिय के अनुकूल बहुसंख्या में नहीं होतीं । अपने प्राकृतिक रूप में खाने योग्य कम ही होती हैं । लौकी, तोरई, रतालू, टिण्डे कच्चे नहीं खाए जाते । इन्हें आग पर पकाने की आवश्यकता पड़ती है । टमाटर, गाजर, मूली, खीरा, ककड़ी आदि ऐसे हैं, जिन्हें कच्चा भी सलाद के रूप में खाया जा सकता है ।

सूखे मेवे बलवर्धक शक्तिदायक तो होते हैं पर सुपाच्य नहीं होते । पाचन में गरिष्ठ तथा सबके लिए सुलभ न होनेके कारण इन्हें खाया जाना अपनी चिकित्सा पद्धति के अनुसार उचित नहीं है । दूसरे परिपूर्ण आहार होते हुए भी किसी एक पर पूरी तरह रहना शरीर विज्ञान की दृष्टि से भी संगतियुक्त नहीं है ।

सूखे पदार्थों का रस नष्ट हो जाने के कारण वे उतने लाभदायक भी नहीं रहते । इनकी तुलना में हरे अन्न अच्छे हैं । चना, मटर, बाजरा, ज्वार, गेहूं आदि भिगोकर अंकुरित कर कच्ची अवस्था में या हल्का पकाकर खाए जाएं तो बड़े लाभदायक होते हैं । इनके अतिरिक्त दूब, गेहूं के जवारे, बरसीम अपने आप में परिपूर्ण हैं । ऐसे उदाहरण विद्यमान हैं कि इनमें से कोई एक पर रहकर व्यक्तियों ने अवधि विशेष काटी और अभूतपूर्व परिवर्तन अपने अंदर अनुभव किया । अनुकूल पड़ने पर दूध, दही, मट्ठा का भी कल्प किया जा सकता है ।

दुग्ध कल्प की चर्चा सर्वाधिक होती रहती है । यह सर्व सुलभ है भी । पर मात्र दूध पर एक माह तक बने रहने के लिए साधक की प्रकृति का उसके अनुकूल होना जरूरी है । द्रव्य के प्रयोग की एक सामान्य प्रतिक्रिया है–कोष्ठबद्धता । इसका ध्यान रखते हुए ही निर्धारण किया है कि दुग्ध पर रह सकने की स्थिति व्यक्ति की है या नहीं । पाश्चात्य देशों में तो दुग्ध कल्प का प्रचलन अब बढ़ता ही जा रहा है । प्रतिपादन यह है कि सभी रोग किसी आवश्यक तत्व, खनिज या विटामिनों की कमी के कारण होते हैं । हृदय रोग के रोगियों व मस्तिष्कीय रक्त स्राव के गंभीर मरीजों को चिकित्सक महीनों तक दूध पर रखते हैं ।

मट्ठा या दही कल्प सभी को अनुकूल नहीं पड़ता । फिर भी जहां ऐसा लगे कि निभाया जा सकता है, वहां इसे भी किया जा सकता है । फलों में सबके लिए सुलभ फल है अमरूद, पपीता, खरबूजा, आम व केला । इन्हें संपूर्ण रूप से गूदे के रूप में लिया जा सकता है । सेब को सब ले नहीं सकते, फिर भी जो मात्र इसी पर रहना चाहें, उसे उबालकर खाएं । इसी प्रकार अमरूद के बीज भाग को अलग कर मात्र गूदे को धीरे धीरे चबाकर लेना चाहिए । आमाशय व आंतों की सफाई, रस शोधक व बलवर्धन के लिए इसे श्रेष्ठतम माना जाता है । फल मौसम के अनुकूल चुने जाएं व पूरी तैयारी के साथ शरीर शोधन की यह तपश्चर्या की जाए ।

बथुआ, पालक, मैथी, चौलाई, लौकी, तोरई, ककड़ी, खीरा ऐसी तरकारियां हैं जिन्हें उबालकर लेने पर तथा स्वाद के लिए ऊपर से नमक आदि कम से कम प्रयुक्त करने पर ये शरीर शोधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं । कल्प हेतु अंकुरित अन्न भी चुने जा सकते हैं । गेहूं, चना, मूंग इन्हीं में आते हैं । इन्हें बाद में थोड़ा भूनकर भी लिया जा सकता है । कल्प छोड़ते समय सामान्य नियम एक ही है । धीरे धीरे नियमित आहार पर आया जाए । शरीर को इस योग्य बनाना कि सामान्य आहार पचा सकें । यह तभी संभव है, जब धीरे धीरे कल्पावधि से दालों के पानी, मात्र दलिया तदुपरांत सब्जी फिर परिपूर्ण आहार इस प्रकार परिवर्तन लाया जाए ।

भोजन प्रसन्नतापूर्वक, आनंदित होकर, धीरे धीरे भगवान का प्रसाद मानकर ही किया जाना चाहिए । परंतु अधिकांश मनुष्य तो हिंसक भोजन ही करते हैं । प्रख्यात दार्शनिक हार्नोव का कहना है कि हिंसक भोजन का एक मात्र अर्थ मांसाहारी भोजन करना ही नहीं है, हिंसक भोजन यह भी है कि कोई आदमी उस स्थिति में भोजन कर रहा है, जबकि उसकी भावदशा भोजन के लिए तैयार नहीं है । वह क्रोध में है, चिंता में है और ईर्ष्या में है तो वह मांसाहार से भी ज्यादा हिंसक है । जब किसी और प्राणी का मांस लेकर भोजन किया जाता है, तो वह तो हिंसक भोजन है ही लेकिन जब चिंता और दुख में उसका अपना ही मांस अंदर जलता है, तब वह जो भोजन करता है, वह और भी अधिक हिंसा है ।

भोजन के संबंध में एक और आश्चर्यजनक बात प्रख्यात चिकित्सक केनेथवार ने कही है–''लोग जो भोजन करते हैं उसमें से आधे भोजन से उनका पेट भरता है और आधे से चिकित्सकों की जेब भरती है । अगर वे आधा भोजन ही करें तो वे बीमार ही नहीं पड़ेंगे और न ही उन्हें कभी चिकित्सकों के पास जाने की जरूरत होगी'' । पढ़ने सुनने में यह बात आश्चर्य भरी है परंतु है बिल्कुल सच । निरीक्षणात्मक दृष्टिकोण से यदि हम अपने द्वारा ग्रहण किए जाने वाले आहार के संबंध में सोचें तो आसानी से यह पता चल जाएगा कि जो भोजन हम कर रहे हैं और जितनी मात्रा में कर रहे हैं तथा जिस प्रकार कर रहे हैं वह हमारे स्वास्थ्य के लिए हितकारी कम और हानिकारक ही ज्यादा सिद्ध होगा ।

यद्यपि कुछ लोग भोजन न मिलने से मरते हैं तो उससे अधिक संख्या ऐसे लोगों की है जो अति भोजन के कारण मरते हैं । वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि कोई भी व्यक्ति बिना भोजन किए तीन माह तक आसानी से जीवन चला सकता है । भारतीय तपस्वियों और योगियों ने तो आत्म प्रयोगों द्वारा इस क्षेत्र में मनुष्य शरीर की सामर्थ्य और क्षमता को और भी अधिक उच्च सिद्ध किया है, परंतु एक साधारण व्यक्ति विज्ञान की दृष्टि से तीन माह तक बिना किसी बाधा के बिना भोजन किए स्वस्थ और नीरोग रह सकता है । लेकिन कोई व्यक्ति तीन माह तक नियमित रूप से अति भोजन करे तो किसी भी स्थिति में जीवित न बचेगा । सौभाग्य से यदि जिंदा रह भी जाएगा तो मृत व्यक्ति की तरह ।

अति भोजन के साथ साथ एक और दोष है हमारी आहार पद्धति में । हम जो भोजन करते हैं शरीर की आवश्यकता को दृष्टिगत रख कर नहीं करते । थाली में सजे विभिन्न पकवान, तीखे, चरपरे, खट्टे, मीठे, तले, जले, भुने खाद्य पदार्थ शरीर को स्वस्थ रखने की अपेक्षा हमें रुग्ण और बीमार ही बनाते हैं । हमारी भोजन की थाली में आधे से अधिक पदार्थ जहरीले होते हैं । हम जानते भी है कि इन पदार्थों का उपयोग शरीर व्यवस्था में किसी भी प्रकार सहायक नहीं हैं फिर भी उनका प्रयोग-करते चलते हैं–महज स्वाद के कारण । महज स्वाद के कारण किया गया भोजन, उसके गुण दोष को बिना ध्यान में रखकर किया गया भोजन मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए किसी भी प्रकार हितकारक नहीं हो सकता ।

बंदूक की गोली या जहर की शीशी कुछ क्षणों में थोड़े से समय में ही जीवन का अंत कर देती है । परंतु स्वेच्छा से ग्रहण किया गया इस प्रकार का विष व्यक्ति को घुट घुट कर हत्या करता है । उसे तड़पा तड़पा कर मारता है । भोजन की यह दूषित प्रक्रिया मनुष्य शरीर को खोखला और कमजोर बना देती है । इस प्रक्रिया का एकदम विपरीत परिणाम होता है । भोजन जब कि स्वास्थ्य और शक्ति के लिए ही किया जाता है, रोग और बीमारी लाने लगे तो जीवन कैसे बच सकेगा ? इसकी कोई संभावना ही नहीं है । अतएव भोजन के संबंध में इन दो तीन मोटी मोटी साधारण किंतु अति महत्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखा जाए तो शरीर और जीवन के लिए आहार का प्रयोजन पूरा हो सकता है ।

वास्तव में पिछले सौ दो सौ वर्ष के भीतर सभ्यता की वृद्धि के नाम पर हमारे खान पान में जो परिवर्तन हुए हैं, वे वरदान की बजाए शाप सिद्ध हुए हैं । रहन सहन और खानपान में जो परिवर्तन हुए हैं, वे कोई शुभ अथवा बुद्धिमत्ता के प्रमाण नहीं माने जा सकते हैं । उस समय जब हम अपना आटा घर की चक्की पर पीसकर मोटी रोटी बनाकर खाते थे और शाक तरकारी के नाम पर दस पांच तरह के हरे शाक या मामूली तरकारियां ही मिल पाती थीं अन्यथा छाछ, दूध आदि से ही काम चला लेना पड़ता था, तब हम जितने कार्यक्षम रहते और वैद्य हकीमों के पास हमको जितना कम जाने की आवश्यकता पड़ती थी, इस समय हमारी हालत उससे बदतर हो रही है ।

आजकल एक तरफ चिकित्सकों और दवाओं की संख्या बहुत बढ़ती जा रही है और दूसरी ओर रोगों में भी उतनी ही अधिकता हो रही है । वास्तव में यह इस युग की एक विचित्र परस्पर विरोधी स्थिति है कि एक ओर चिकित्सक इतने कुशल होते जा रहे हैं कि वे हृदय और फेफड़े को भी काटकर फिर से ठीक कर देते हैं । ऐसे ऐसे इंजेक्शन निकल आए हैं जो मृतप्राय को जिंदा कर देते हैं और अस्पतालों और चिकित्सकों की दुकानों पर मरीजों की भीड़ दिन दूनी रात चौगुनी होती जाती है । इससे हम इसी स्पष्ट निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि कृत्रिम जीवन में चाहे कितनी भी चमक दमक क्यों न हो उसका परिणाम कभी भी अच्छा नहीं हो सकता ।

यों तो थोड़ा बहुत मद्य मांस और नशे के अन्य पदार्थ सभी देशों में निम्न वर्ग में पहले भी प्रचलित थे, पर उनको सदैव गर्हित और हानिकारक ही माना जाता था । पर इस नई सभ्यता ने उनको उच्च वर्ग में भी खुले तौर पर सम्माननीय स्थान दे दिया, इससे संसार की असीम क्षति हुई है । उससे लोगों के चरित्र का स्तर बहुत गिर गया है और उनका स्वास्थ्य भी दूषित हो गया है । अब जो थोड़े से लोग डाक्टरों का कीमती इलाज कराने में समर्थ हैं, प्रतिदिन-इंजेक्शन लगवाने का खर्च कर सकते हैं, उनकी बात तो छोड़ दीजिए, पर शेष सामान्य स्थिति के लोगों को इसके कारण परेशानी, कष्ट, अभाव ही सहन करना पड़ता है । उनका जीवन पहले की अपेक्षा दुख पूर्ण और निम्न श्रेणी का ही बन गया है ।

प्रचलन में नमक का मिश्रण आहार का एक आवश्यक अंग माना जाता है किंतु चिकित्सकीय मत के अनुसार यह दृढ़तापूर्वक प्रतिपादित किया जाने लगा है कि नमक बिल्कुल छोड़ देना चाहिए ।

शरीरशास्त्र एवं जैव रसायन की दृष्टि से नमक शरीर में बिल्कुल कम हो जाने पर जीवन धारण किए रहना संभव नहीं है । रूस में जिन लोगों को हृदय के और रक्ताभिषरण रोग होते हैं, उन लोगों को नमक रहित आहार लेने का सुझाव देते हैं । इन चिकित्सकों का यह भी अनुभव है कि सामान्य रोग जैसे कि सर्दी, जुकाम, ब्रोन्काइटिस और सामान्य चर्म रोगों में केवल नमक छोड़ देने से अन्य किसी प्रकार की दवा न लेने पर भी वे रोग ठीक हो जाते हैं ।

ऐसा होने का कारण यह बताया जाता है कि नमक रहित आहार लेने से शरीर में पाए जाने वाले अतिरिक्त नमक को पचाने तथा पेशाब के माध्यम से बाहर फेंकने का अतिरिक्त श्रम भार गुर्दे व अन्य ग्रंथियों को नहीं उठाना पड़ता है । नमक न्यूनाधिक मात्रा में लेने से शरीर में पड़ने वाले प्रभावों का सर्वेक्षण करके विभिन्न देशों में पाए गए तथ्य इस प्रकार हैं–उत्तरी जापान के लोग बहुत अधिक मात्रा में नमक लेते हैं तथा इस क्षेत्र में ब्रेन स्ट्रोक से मृत्यु की संख्या बहुत अधिक पाई जाती है । दक्षिण पेसीफिक के आदिवासी नमक कभी नहीं खाते उन्हें रक्तचाप एवं मस्तिष्क के स्ट्रोक की शिकायत कभी नहीं होती ।

अमरीका के हब्शी बहुत अधिक मात्रा में नमक लेते हैं, उनमें उसी क्षेत्र के गोरे लोगों की अपेक्षा तीन गुना अधिक रक्तचाप हुआ करता है। इसलिए अमरीका के चिकित्सकों ने यह घोषित किया है कि यदि प्रत्येक व्यक्ति नमक रहित आहार लेना शुरू करे तो रक्तचाप के रोग में बिना किसी प्रकार के औषधि उपचार का सहारा लिए कमी हो सकती है ।

कैंसर के रोग से जितने अधिक लोगों की मृत्यु होती है, उससे अनेक गुने लोगों की मृत्यु रक्तचाप की " शिकायत से हुआ करती है । मनुष्य के प्रवाहित रक्त में ३० ग्राम नमक होता है । शरीर के अन्य जीवकोष तथा स्रवित रसों आदि में कुल मिलाकर ३०० ग्राम नमक होता है ।

दक्षिण पेसीफिक के आदिवासी जो नमक नहीं लेते हैं, उन्हें रक्त संबंधी कोई रोग न होने का रहस्य नमक रहित भोजन तथा उनके प्राकृतिक जीवन क्रम में निहित है । एक ओर यह बात सही है कि हृदय एवं गुर्दे की बीमारियों के लिए नमक नुकसानदेह है तो दूसरी ओर कई लंबे समय से थकान ग्रस्त लोगों को विशेष अवसर पर औषधि की तरह नमक देने से उनका खोया स्वास्थ्य एवं बल तेजी से वापस लौट आता है । अस्पतालों में आपरेशन के बाद अधिकतर लोगों की जान बचाने के लिए 'सेलाइन वाटर' देना पड़ता है । नमक लेने वाले और नमक न लेने वालों की तुलना करने पर पाया गया है कि नमक लेने वालों को न लेने वालों की अपेक्षा २ से ३ गुना अधिक रक्तचाप पाया जाता है ।

सोवियत चिकित्सकों के अनुसार विभिन्न मनुष्यों पर नमक का प्रभाव भिन्न भिन्न होता है । यह देखा गया है कि आरामतलब लोगों की अपेक्षा श्रमशील लोगों पर नमक का कुप्रभाव बहुत कम होता है । अमरीका के रॉकफेलर युनिवर्सिटी के १९८१ के अनुसंधानों के अनुसार जो व्यक्ति नमक के प्रभावों के प्रति अति संवेदनशील हैं उनके डिब्बाबंद व कारखानों में निर्मित आहारों से नमक दूर कर देने पर अधिक स्वास्थ्य लाभ होता है । इसी प्रकार, ब्रिटेन के लिसेस्टर रॉयल इन्फर्मरी के एक अध्ययन में चिकित्सकों ने बताया है कि अधिक नमक के कारण स्वस्थ लोगों की तुलना में दुर्बलों और रोगियों को अधिक नुकसान होता है ।

संसार के कितने लोग नींद के लिए बेचैन बने रहते हैं, इसका ठीक अनुमान तो नहीं लगाया जा सकता किंतु यह संख्या करोड़ों में है जिन्हें या तो नींद आती नहीं या कम आती है या नींद के लिए बेचैन रहते हैं और अनेक प्रकार की औषधियों का प्रयोग करते हैं ।

प्रो. कोराल्ड ने इस निद्रा समस्या का गहन अध्ययन किया है और अनेक रोगियों पर लगातार प्रयोग करने के उपरांत इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि जो लोग नमक का अधिक प्रयोग करते हैं अथवा शक्कर अधिक खाते हैं उनको अनिद्रा रोग लग जाता है क्योंकि सामान्य मनुष्य को भोजन और स्वाद के अतिरिक्त उसके बाद के परिणामों, हानि लाभ का ज्ञान रंच मात्र भी नहीं होता ।

शरीर में अनेक प्रकार के नमक होते हैं और उनकी पूर्ति के लिए आहार में नमक की मात्रा रहनी आवश्यक है । किंतु ध्यान रखने योग्य बात एक ही है कि वे वनस्पति वर्ग के होने चाहिए, खनिज वर्ग के नहीं । हर वनस्पति में क्षार होते हैं । अन्न, फल, शाक, दूध आदि सामान्य आहार में उन लवणों की मात्रा भरी रहती है जो शरीर के लिए आवश्यक हैं किंतु वे खनिज नमक की तरह खारी या जायकेदार नहीं होते । जितने नमक की शरीर को आवश्यकता है उतना सामान्य खाद्य पदार्थों में सहज ही समाहित होता है और उतने भर से शरीर की स्वाभाविक आवश्यकता सहज ही पूरी होती रहती है । इसके लिए उस खनिज नमक की तनिक भी आवश्यकता नहीं पड़ती ।

विज्ञान की आधुनिक गवेषणाओं के अनुसार नमक मनुष्य शरीर के लिए एकदम अनावश्यक है । स्वास्थ्य और शरीर व्यवस्था के लिए जितना नमक आवश्यक होता है, वह प्राकृतिक रूप से अन्न और सब्जियों के रूप में अपने आप मिल जाता है । भारतीय योग ग्रंथों में आहार शुद्धि का जहां उल्लेख आता है वहां प्रत्याहार साधना के अंतर्गत नमक का प्रयोग बंद कर देने की बात भी कही गई है । भारतीय धर्मग्रंथों में नमक के त्याग को एक व्रत के रूप में निरूपित किया गया है । धार्मिक दृष्टि से नमक त्याग का महत्व तो है ही, विज्ञान की खोज ने भी इस नियम की पुष्टि की है । यही नहीं नमक को शरीर के लिए हानिकारक भी माना है ।

नमक यदि विष है तो शरीर पर इसका प्रभाव क्यों नहीं पड़ता ? इसका एक बहुत बड़ा कारण है । शताब्दियों से नमक का प्रयोग करते चले आ रहे मानव जाति का शरीर और उसके कोष इसके अभ्यस्त हो गए हैं । फिर भी मनुष्य शरीर की प्रकृति इस तत्व की उपस्थिति सहन नहीं करती और पसीने, मूत्र आदि के रूप में यह विसर्जित होता रहता है । फिर भी इसका प्रभाव किसी न किसी रूप में तो होना ही है और वह होता है दु:साध्य रोगों के रूप में । रक्तविकार, हृदयरोग, आमाशय के रोग आदि कई बीमारियों का कारण नमक ही है । चिकित्सक लोग रोगी की चिकित्सा करते हुए परहेज में नमक न खाने की सलाह देते है इसका कारण यही है कि शरीर में नमक की मात्रा बढते रहने पर रोग का दूर होना मुश्किल है ।

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ.प्र.)

ज्ञानयज्ञ में आप भी आहुति दें

समस्त कठिनाइयों का एक ही उद्गम है—मानवीय दुर्बुद्धि। जिस उपाय से दुर्बुद्धि को हटाकर सद्बुद्धि स्थापित की जा सके, वही मानव कल्याण का, विश्वशांति का समाधानकारक मार्ग हो सकता है।

युगऋषि परम पूज्य पं० श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने वर्तमान युग की समस्याओं के समाधान हेतु हजारों पुस्तकें लिखीं हैं। इन पुस्तकों को जन-जन को पढ़ाना, इस युग का युगधर्म है। पुस्तक सूची निम्न पते पर पत्र डालकर नि:शुल्क मँगा लें।

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा-२८१००३
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९
फैक्स : (०५६५) २५३०२००
E-Mail : yugnirman@awgp.org

युग निर्माण योजना, मथुरा
शांतिकुंज, हरिद्वार

SV 44